सुधा-वर्षिणी



ब्रज विहारी पाण्डेय
नवनीत



सुधा - वर्षिणी

रचयिता

ब्रज बिहारी पाण्डेय "नवनीत"

एम० ए० साहित्यालंकार

प्रकाशक

आध्यात्मिक शोध प्रकाशन

पटना-२०

● प्रकाशक
आध्यात्मिक शोध संस्थान
पटना-२०

● प्रथम संस्करण
(रामनवमी १९८१)

● मूल्य : पन्द्रह रुपए

● मुद्रक : श्री माणिक प्रेस
पटना-४

अमृत विन्दु

कविता स्वर्ग से प्रवाहित होने वाली पृथ्वी पर अमृत की अजस्र-धारा है। वह मानव मात्र को आनन्द विभोर ही नहीं करती, अपितु जड़-चेतन को रस-पल्लवित करने की क्षमता रखती है।

"सुधा-वर्षिणी" में "प्रवाहिनी" जागरण एवं "वसंत ज्वाल" तथा रस तरंगिनी से सम्बन्धित कविताओं को संग्रहित किया गया है। "प्रवाहिनी" से ली गई कविताओं में शाश्वत प्रकृति के विभिन्न रूपों का चित्रण है। उनसे काष्ठ में भी कम्पन का सृजन सम्भव है। "जागरण" में राष्ट्र-निर्माण हेतु मानवीय चेतना एवं भावना को उद्बोधित करने का प्रयास किया गया है। जैसे हिमालय आदि।

कविता शुष्क प्राण को पल्लवित ही नहीं करती अपितु जीवन में गतिशीलता के सृजन के साथ मानव-मात्र को रस-विभोर कर सकती है। कविता को सुधा-वर्षिणी की संज्ञा दी गयी तो अत्युक्ति नहीं होगी।

ब्रज बिहारी पाण्डेय "नवनीत"

रामनवमी १३।४।८१

समर्पण

संगीत, साहित्य एवं कला-मर्मज्ञ

स्वर्गीय श्री पंडित

रमाशंकर उपाध्याय जी

(भू० पू० निरीक्षक निबंधन विभाग, बिहार)

की

पुण्य स्मृति में समर्पित

"नवनीत"

६।१०।८१

विषय सूची

—:o:—

"प्रवाहिनी"

सरिता जल

रजत चांदनी-सा जल।
बहता अविरल गति से,
मधुर निनादित कलकल।

हरी हरी डालों को,
है गोद में छाया।
स्वर्ण-युक्त पंखों पर।
नर्तित किरणें पाया॥

मधुर निनादित कलकल।
रजत चांदनी सा जल॥

पक्षी के युग्म सुन्दर,
तैर रहे जल ऊपर।
रजत धार लेकर वह
मथर बहती भूपर॥

करती अविरल कलकल।
रजत चांदनी सा जल॥

— ——

गंगा नदी

शत शत अमर तू स्रोतस्विनी ।

बहती भारत माँ की छाती पर
युग युग तू अभिवन्दनी ।
शत शत अमर तू स्रोतस्विनी ।।
उज्ज्वल, निर्मल धारा प्रतिपल,
मंथर गति से करती कलकल,
तू दुर्जेय हिमालय अंगिनी ।

दुर्गम अगम प्रशस्त मार्ग से,
बहती भारत के अंचल से,
मंथर, द्रुततर ले तरंगिनी ।
शत शत अमर तू स्रोतस्विनी ।

लहराता पौरुष का सागर,
शक्तिपूर्ण धारा के ऊपर ।
सह लेती जो अपने बलपर
यांत्रिक-युग का सब भार अजर ।।
तूफान वेग सी संचालिनी ।
शत शत अमर तू स्रोतस्विनी ।।

छोटी छोटी अगनित नौकाएँ,
बहती तेरी धारा ऊपर,

युग युग से निर्वाणदायिनो ॥
शत शत अमर तू स्रातस्विनो ।

कितनी कलुषित पापात्माएं,
हैं घुल घुल कर बनती निर्मल,
तुम हो स्वर्णिम क्षितिज चुम्बिनी,
शत शत अमर तू स्रोतस्विनी ॥

नीले नभ की अद्भुत छाया,
नीचे बहती हो चंचलतर,
तुम हो अमृतस्रोतवर्षिणी ।
शत-शत अमर तू स्रोतस्विनी ॥

———

संध्या

लिपटा पंखों को लाली से,
चलती जाती संध्या चंचल।
छू जाती धीरे पंखों से,
अनुरंजित भूतल का अंचल।

पंख सुनहले क्षितिज पार से,
चमक रहे अनुरंजित रंग भर।
पेड़ों की रंगित फुनगी पर
संध्या देती लाली भर भर॥

लाल रंग से रंजित है सब,
वसुधा की धारा का कण कण।
थिरक रही पैरों में गति भर,
धरती का जो स्वर्णिम आंगन॥

अपने कोमल हाथों से यह,
नभ की गोदी में थपकाती,
रतनारी, अलसायी आंखें,
जगती को कुछ बाद सुलाती॥

——

जेठ की लू

अंगार कहूँ, या ज्वाल कहूँ ?
मैं जलन कहूँ या दलन कहूँ ?

तेरे आंगन में बरसातें,
आती, ·ातीं बातें रिमझिम।
बीत बीत जाती पल पल में,
कितनी रातें चन्दन चर्चित ॥

जलता कैसा अंगार प्रबल ?
धधक रहा है भू का अंचल।
जला रही भूतल धूप प्रबल,
जल सी चम चम करती चंचल ॥

अंगार कहूँ, या ज्वाल कहूँ ?
मैं जलन कहूँ, या दलन कहूँ ?

जले अंगार सा पीला बन,
जलता भूतल का सब कण-कण।
जगे धूली निर्मित प्रभंजन,
धरती जाती आवें सावन ॥

ज्वाल अरि ! प्रबल काल सी,
लिपटी चिपटी इस धरती पर।

फैला देती हो तरल अग्नि,
जलती मरती इस धरती पर ।।

जलता कैसा अंगार प्रबल ?
धधक रहा है भू का अंचल,
अंगार कहूँ, या ज्वाल कहूँ ?
मैं जलन कहूँ, या दलन कहूँ ?

—:o:—

आषाढ़ की झड़ी

गरज रही घनघोर घटा नभ।
झड़ती बून्दें धीरे झर-झर।

जली तपी धरती करती है,
रे ठंढा शीतल जलता मन।
छाये हैं सुदूर भूतल से,
काले-काले घुंघराले घन।

रिमझिम बादल बरस रहा है,
झरता जाता अमृत सा कण,
गिरता जाता नभ से झर झर,
पुलकित, आह्लादित, जीवनधन

कटे-छटे हीरे सा उज्ज्वल,
गिरती बून्दें धीरे झर झर,
बरस बरस जाते है बादल
धरती का कण ठंढा कर कर।।

बरस रहा है बादल रिमझिम।
झड़ती बून्दें धीरे झर झर।।

जली हुई इस जगती ऊपर,
झरता अमृत सा कर तर-बर।

बुझी प्यास जाती धरती की
गाती बून्दें कुछ गीत अमर ॥

धारा बहती धरती ऊपर,
ठंढा शीतल सब जीव अचर।
उजले, उजले हीरे छाये,
हंसते खेलते धारा पर ॥

नभ चलनो से धरती ऊपर,
गिरती बून्दें जल्दी झरझर।
बुझी प्यास जाती धरती की
गाती बून्दें कुछ गीत अमर ॥

बरस रहा है बादल रिमझिम ;
झरती बून्दें धीरे झर झर ॥

—:o:—

कुम्भरार की संस्कृति

सोया सांस्कृतिक नव तूफान ।
सोये जो तुम हो कुम्भरार ।।

बीते युग का अमर प्राण ।
गौरव-युग की गाथाएँ ।
छिपी नसनस में पद दलित ।
संस्कृतियों की व्यथाएँ ।।

गुप्त काल, मौर्य काल की
है छायी तुम में विस्मृति ।
जर्जर, ईंट, खंडहर में,
है छिपी लुटी जो कीर्ति ।।

है छिपा अशोक का गान ।
सोया सांस्कृतिक तूफान ।।

विगलित, खंडित रे सुषुप्त,
जो संस्कृति भूली खोयी ।
उसने कितने देशों की,
है उज्ज्वल मस्तक धोयी ।।

रे हुए कितने कल्याण ।
सोया सांस्कृतिक, तूफान ।

संस्कृति के ऊपरी भागों
पर है मिट्टी की धरती।
चिर कितनी लूटी संस्कृति
संस्कृति पर छाया करती ॥

स्वर्ण-काल का अमर दान।
सोया सांस्कृतिक तूफान ॥
सोये जो तुम कुम्भरार।

———

अम्बर के दीप

टिमटिमाते जल रहे हैं,
दीप उनकी लौ शीतलता।
मुक्त हाथों से लुटाते,
देख लो कैसी कोमलता

ये तारें क्या मोती हैं?
जो दूर नभ में रहे चमक,
अपनी द्युति फैला जग में
अपनी कांति में रहे दमक॥

तारे दीपक जलते नभ में,
देते अगनित ज्योति पसार।
शीतलता सुधा की वर्षा
पाता क्या उससे संसार॥

हंसते नभ में तारे सारे,
झरते मोती अगनित अपार।
बरस पड़ता है भू के ऊपर,
ओस कणों से उसका प्यार॥

नभ में चांद,
विहंसते नभ में तारे।
हंसती उसकी चांदनी,
चमका अनमोल सितारे॥

——

नभ आंगन

नभ का विस्तृत, नूतन आंगन,
चमक रहा अति उज्ज्वल बन बन।
कितना फैला, कितना विस्तृत,
लिपा हीरे से यह आंगन ॥

शाश्वत रे यह महा चिरंतन,
स्वर्ण-तुल्य दीप्ति मय कंचन।
चमक-चमक जाता क्षण भर यह,
आ जाती कभी रवि किरण ॥

इसमें फैला जो नीलापन,
कुम कुम सा उसका रूप वरण।
देख देख युग-युग से करता,
आया कवि जिसका अति चिंतन ॥

नीला, और सुनहला
उजला रंग, पीला सम्मिलन।
छाया है इसके रूपों में,
कितने रंगों का रूप मिलन ॥

आंगन में करतो नृत्य किरण।
नभ का विस्तृत नूतन आंगन ॥

— —

तुम (नारी के प्रति)

तुम मधुर वीणा का मधुमय स्वर,
तुम स्रोत सुधा, तुम निर्मल कण,
तुम स्वर्ग लोक की निधि सम्पन्न,
तुम हो स्वच्छ, शान्त अमृत मन,
तुम गंधयुक्त स्वर्णिम कंचन,

तुम मधु गुंजन का मधु स्पन्दन,
तुम प्रेम पाश का चिर बंधन।
तुम जागृत कवि का नव चिंतन।
तुम माँ धरती की स्वच्छ वसन।
तुम स्वर्गिक छवि की रूप मगर,
तुम मधुर वीण का मधुमय स्वर।

तुम जग मन्दिर की नई किरण।
तुम आत्मा का भी स्फुरण।
तुम पाटल कुसुमित सुरभित मन।
तुम करनेवाली हो विचरण
तुम नभ की हो मन्द समीरण।
तुम स्रोत सुधा, तुम निर्मल कण,
तेरा सुन्दर कितना जीवन।

मधुर-मधुर तेरा आलिंगन,
है वह कितना मीठा प्रतिपल,
छू सकती तुमको क्या हलचल,
तुम हो देश भारती की धन।
तुम चन्द्रसुधा, तुम चन्द्रकिरण,
तुम स्वर्ग लोक की निधि सम्पन्न।

—:o:—

सोन नदी

भारत माता धरती की तू।
जलतो, बलती स्वर्णिम ज्योति ।।

बालू की रेतों में सोयी,
हंसती हंसती कुछ गाती।
भारत की स्वर्णिम धरती पर,
दूर कहीं से चलती जाती ।।

घुली हुई लाली गोदी ले,
टेढ़े मेढ़े मार्ग बनाती।
सिंहनाद कर कभी गरजती,
चौड़ी विस्तृत जिसकी छाती ।।

बन जाती हो चलती पथ में,
जलती लू में निष्प्राण तुम्हीं।
सिंहनाद कर कभी गरजती।
उमड़ा सावन तूफान तुम्हीं ।।

बालू की है तेरी काया,
बालू पर फैली है माया।
धरती के आंगन को तूने,
सिक्ताकण से है नहलाया ।।

तेरे ही आंगन में कितने,
बिखरे छाये रहते मोती।
भारत माता की कैसी तू।
जलती बलती स्वर्णिम ज्योति ॥

रंग सुनहला कैसा तेरा,
दूर-दूर से कभीं चमकता।
धरती के रंगों से रंजित
मुख तुम्हारा खूब दमकता ॥

युग युग से संचित धरती के,
सुप्त भैरव हूंकार तुम्हीं।
रे कल कल कर गाने वाली।
धरती का छिपा गान तुम्हीं ॥

फैली आंगन की जो लाली,
चमचम, चमचम, चमचम करती।
धूप में तेरी बालू-राशि,
दीपक सी है बलती रहती ॥

भारत माता धरती की तू।
जलती बलती स्वर्णिम ज्योति ॥

——०::

प्रिया

मैं मधु निशा तू चाँदनी।

प्रिया, तुम जागृत मधु वर्षिणी।
मैं मधु निशा तू चाँदनी ॥

कर कलकल गति मंथर चल,
जीवन का हूँ मैं निर्झर।

तू मन्द मन्द प्रवाहिनी।

उज्ज्वल धार से सम्मिलित,
जल का मैं निर्मल प्रतिपल।

तू हो स्वच्छ मन्दाकिनी।

नभ में बहनेवाला मैं,
दूर देश का मलय-पवन।

तू समीरण संचारिणी।

लेकर लहरों पर लहरन
बहनेवाली मैं डाली।

तू बहती मन्द गामिनी।

मैं नभ की घनघोर घटा,
मैं संघर्षण, मैं गर्जन,

तू हो कौंधती दामिनी।

मैं नखर जग का नश्वर,
दलित कुचलित रे जीवन,

तू जग की प्राण दायिनी ।

जले अंगार का हूँ मैं,
अनुरंजित जलने वाला कण ।

तू हो मेरी शीतलाग्नि ।

मैं जीवन वीण का तार ।
मधुर मचलित मीठा स्वर ।

तू हो संगीतवादिनी ।

चन्द्र बीच मैं चन्द्रकिरण,
झरनेवाला मधु झरझर,

तू हो शरदेन्दु हासिनी ।

ले जीवन का कोमल बल,
मैं धरती का गान प्रबल,

तू मेरी सुधा वर्षिणी ।

मैं शाश्वत जीवन निर्झर,
करता अहर्निश मधुस्वर,

तू हो जीवन निर्झणी ।
मैं मधु निशा, तू चाँदनी ॥

—:०:—

प्रियसे

नश्वर है तन, नश्वर है मन,
नश्वर है यह सारी काया।
प्रिय अद्भुत है तेरी माया।

प्रेमपाश जग का बंधन है।
जीवन का चर्चित चंदन है।
हँसती मिटती निखिल काया।
प्रिय अद्भुत है तेरी माया॥

तेरे उर में प्यार बसा है।
बसी हुई कल्पना की राशि।
ठंढी शीतल तेरी छाया।
प्रिय अद्भुत है तेरी माया॥

भाव-पंख फैला तितली-सी।
सोती रहती जग मन्दिर में।
जलती धरती पर भी देवी।
अमृत तूने है बरसाया॥

छिपी तुम में मधुर हँसी है।
कोमलांगी, री मधुरभाषिणी।
जगती की फैली धूली में।
मोती किसने कब है पाया॥

प्रिय अद्भुत तेरी है माया।

धरती पर जो जीवन डाली ।
तेरा क्षण भर फिर लहरा ये ।
पथिक थका राह का राही ।
सूखे जीवन में रस पाये ।।

रस तूने अद्‌भुत बरसाया ।
प्रिय अद्‌भुत तेरी है माया ।।

—:o: –

सब गाते हैं

धरती का कण-कण गाता है।

कोयल गीत मधुर गाती है।
आँधी सन् सन् कर गाती है।
खिला फूल भी कुछ गाता है।
गंगा को धारा गाती है।
जग के सचर अचर गाते हैं।
धरती का कण-कण गाता हैं।

नभ में नई किरण गाती है।
रवि की नई प्रभा गाती है।
सृष्टि गीत मधुर गाती है।
वृष्टि सरस झमझम गाती है।
स्वर्ग गोत नभ से आता है।
धरती का कण-कण गाता है।

——

पुरवैया

लिए क्रान्ति का नया तूफान।
बहती जाती है पुरवैया ॥

जोरों की आँधी बन झंझा,
पेड़ों से टकरा जाती है।
बहती पथ में चंचल गति से,
सन् सन् कर कुछ गाती है ॥

गिरे पड़े वृंत-च्युत फूलों,
को कोमल कर से सहलाती।
खंडित डाली तोड़ वेग से,
कोमल किसलय को दहलाती॥

पुरवैया के प्रति कण-कण में,
सोया है संदेश देश का।
मिलता है प्रतिपल झोकों में,
रूप भारतीय आदर्श का ॥

नव प्रगति का रूप बनकर,
फैलाती, कोमलता जग में।
देती हिला सुला जगती को,
चलते चलते अपने मग में ॥

जीवन निर्झर

झर झर झरता जीवन निर्झर।

अमृत से सृष्टि कर तरबर।
झरझर झरता जीवन निर्झर।
झरता जीवन तुम में प्रतिपल।
झरते रहते जीवन निर्झर॥

करती रहती मिटकर कल कल।
उर्म्मि आह की मन्दस्वर भर॥
है जल तेरा जीवन का रस।
कितने मधुर तुम कितने सरस॥

बहते रहते जगती ऊपर।
नृत्य रूप धर उतर उतर कर।
झर झर झरता जीवन निर्झर॥

× × × ×

तेरी धारा टकरा पत्थर।
खातीं कितनी मुसीबतें बल॥
धारा ऊपर ऊपर बहकर।
जीवन पथ से लहर-लहर कर॥

बहती जाती मंथर स्वर भर।
जल के ऊपर अंतर भीतर॥

नृत्य रूप धर उतर उतर कर ।
झर झर झरता जीवन निर्झर ॥
× × × ×
तुम झरते आये हो बन-वन ।
बरसाते अमृत सरस कण कण ।
तुम अति शाश्वत महा चिरंतन ।
अद्भुत, नूतन तेरा सर्जन ॥

जीवन रस का लेकर सम्बल ।
बहती तुम में धार प्रबल ॥
धाराएँ तेरी तरल तरल ।
मंथर गति से बहती सरल ॥

तुम में झरता जीवन निर्झर ।
मिटता क्षण-क्षण करता कल कल ॥

झर झर झरता जीवन निर्झर ॥

—:o:—

बैल गाड़ी

बैलों के कंधे से बजती।
आवाज मधुर टुन टुन टुन टुन ॥

धरती का मंथन जो करता,
शक्ति का सागर जो भरता।
जाती है पथ पर कुछ बढ़ती,
आवाज मधुर टुन टुन टुन टुन ॥

पथ पर जो रोड़े गिरे पड़े,
दब जाते पैरों अंकन से।
धरती माता की छाती पर,
चिन्ह बने जाते कंचन से ॥

सींच रहा कंधे के बल से,
भार प्रबल अपने जीवन का।
विह्वल होता मन है मेरा,
पथ की आवाज मधुर सुन सुन ॥

गाँवों के दुर्बल निराहार,
कृषकों की गाड़ी सम्पति है।
बाँस, काठ निर्मित है यह,
चालों में कुछ मंथर गति है ॥

घंटी बजती या जाते वे,
आवाज मधुर करते टुन टुन ॥

—:o:—

रहस्य

कैसी है यह रजनी बाला ?
पहने हैं नक्षत्रों की माला।

नभ यह किसकी अनुपम डाली ?
रे ! पुष्प वाटिका सम थाली।
बुनी हुई उजले तारों से,
नीले नभ की उजली डाली ॥

किस गुलची ने बाग लगाया,
बाग-बाग में फूल खिलाया।
फूल फूल में तार बिछाया।
धीरे धीरे वह सहलाया ॥

मूल सूत्र में उसे पिरोया,
गढ़े रंग में उसे डुबाया,
बन अनन्त उस दूर गगन में,
भूल गया कुछ खोया खोया ॥

टिम टिम करता नक्षत्र उजाला।
शबनम भी हीरे का प्याला।
किस शिल्पकार लघु छेनी से,
नक्षत्र पुष्प वैसा गढ़ ढाला ?

कितना छोटा मनका उसका,
किसने उसको वहाँ बनाया ?

अपने कर से कौन वहाँ पर,
स्वर्ण बालिका को पहनाया ?

यह गजब अरे ! इसकी माला,
दीप शिखा सम बलने वाला।
बाहर भीतर छिपा हुआ है,
मोती सा उसमें एक उजाला ॥

किस अनन्त की स्वर्णिम शाला,
इसमें किसने आभा बाला ?
डाल नक्षत्र को उस आभा में,
किसने है मनके गढ़ डाला ॥

कैसी है यह रजनी बाला।

———

सत्य

मिथ्या जग है, मिथ्या जीवन।
मिथ्या जग का सारा बंधन।।

चित्र टूट जाता क्षणभर में,
तार टूट जाता पल भर में।
मुक्त कंठ भी रुक जाता है,
प्रगटिक क्षणिक स्वर कंपन में।।

प्राण यहाँ पर मिट जाता है,
मृत्यु सत्य सी जब आती है।
तोड़ तोड़ संकीर्ण कगारें,
अपना पंथ बना जाती है।।

मिट्टी पुतला सा जब मानव,
बाँस अर्थी पर पड़ जाता है?
संलग्न लगा गाता जाता।
राम सत्य केवल रहता है।।

क्या है, यह मिट्टी की काया,
मृत बनी निष्प्राण पड़ी है?
ढंकी हुई है चादर में सिमटी,
नहीं यहाँ जो आज खड़ी है?

षड़ी हुई बिल्कुल सोई सी,
निद्रा में तल्लीन बनी है।
मांस पेशियाँ सिकुड़ सिकुड़ कर,
नहीं यहाँ पर आज तनी है ॥

इसमें हँसी मुस्कान नहीं है,
विगलित काया प्राण नहीं है।
सोया सा इस निद्रित तन में
शेष बचा अरमान नहीं है।

मिथ्या जग है मिथ्या जीवन।
मिथ्या जग का सारा बंधन ॥

दीवाली

जग प्रणय की नई दीवाली ।
है लहराती डाली डाली ।।

युग-कपोल पर छाई लाली
झूम रही वसुधा मतवाली ।
पीली झीनी चादर डाली,
भरी प्रेम से प्याली प्याली ।।

किसने ऐसा दीप जलाया,
स्नेह-राग से भर कर लाया ।।
चुपके से धीरे रखता सा,
जीवन में आलोक बिछाया ।।

गंगा यमुना की नव धारा,
नव प्रेम धार में लहरायी ।।
मिलनातुर किसने जगती पर,
प्रणय मिलन की बात सुनाई ।

बंद द्वार फिर खुला मिलन का,
उमड़ प्रेम छाया जीवन का ।।
जले दीप के नव प्रकाश में,
संकेत हुआ आलिंगन का ।।

वह नव अगनित दीप छुपाए,
पीली चादर में मुस्काई ।।
कुछ प्रेम नयी, कुछ प्राणमयी,
वह अंतर की राग सुनाई ।।

झूम चले तारे नभ के सब,
झूम उठा जीवन प्रांगण भी ।।
झंकृत बज उठा तार मनका,
नाच उठा फिर जग प्रांगण भी ।।

भरी प्रेम से प्याली प्याली ।
जग-प्रणय की नई दीवाली ।।

—:o:—

अमर संदेश

बुद्ध की मूर्ति कैसी महान,
प्रस्तर खंडों के बीच आज।
कुछ गूंज रहा है अमर प्राण,
बुद्ध की मूर्ति कैसी महान।

है रश्मियान पर थिरक रही,
विभासित शत-शत प्रकाशकिरण।
झूम छू रही लघुपंख खोल,
धूली धुसरित जो बुद्ध चरण॥

उन चरणों की महिमा अपार,
पाया सात्विक शक्ति संसार।
बीते युग की शांत गोद में,
व्याप्त उस गौतम का व्यवहार॥

प्रबल अहिंसा का जो पोषक,
उसका कैसा रे! अमिट ज्ञान!
ठुकरा कर सारा राज-पाट,
पाया युग अंतिम निर्वाण॥

मिटा सुप्त सारा अंधकार,
फैला जगती में रश्मि पूंज।
निकला था झंकृत तारों से,
व्याप्त आह्लादित हृदय गूंज॥

सम्पूर्ण सृष्टि के कण-कण में,
फैला उसका वह अमिट ज्ञान।
कितना था वैभव पूर्ण श्रेष्ठ,
उस गौतम का अति महादान॥

देकर शक्ति पूर्ण आत्मज्ञान,
दिया वह जीवन का चक्षु खोल।
पिलाया अतृप्त मानवता को,
अपनी वाणी में अमृत घोल॥

सत्य कर्म का लेकर सम्बल,
वह शुष्क नसों में भरा प्राण।
कर्म कांड अन्याय यज्ञों से,
मिला मानवता को तब त्राण॥

दु:खी सृष्टि का देख कुतूहल,
मुक्ति हेतु बुद्ध किया प्रयाण।
नष्ट हुआ जग का क्षण भर में,
औपनिषदिक ब्रह्मदेव ज्ञान॥

बहुदेव वाद कर विनाश;
कर जग का सारा रोग नाश।
किया विश्व के चिर आँगन में,
ज्ञान मिला लोक प्रभा का विकास॥

खोा अंतर्ज्ञान गया जान,
सम्पूर्ण वस्तु का परिवर्तन।
अरे ? क्षणिकता करती कैसी,
क्षण-क्षण जग में नूतन नर्तन॥

आध्यात्मिक भावों का उलझन,
अति बना हुआ संघर्ष जीवन।
किया संचारित वह जनों में,
एक सत्कर्म प्रेरणा का मन॥

आत्म उन्नति का कर विकास,
दिया वह तब नूतन उपदेश।
कर सिंह नाद गुंजा उसका,
उच्चशिखर पर अमर संदेश॥

गया फैल उसका बौद्ध धर्म,
सम्पूर्ण हिन्द आंगन प्रदेश।
तिमिर पूँज को कर नष्ट ध्वंस,
चला आलोक सा फिर विदेश॥

चीन जापान जों प्राच्य देश,
वहाँ पर उसका धर्म विकास।
जनारण्य के बीच हुआ पुनः,
क्रम-क्रम से रे! उसका प्रकाश॥

कितने अनुचर उसके कितने,
हुए वहाँ तब पूर्ण परदास।
मिट गयी क्षण स्पर्श मात्र से,
सब मानवता की कंठ प्यास॥

चितवन

वह स्नेह स्नात कटाक्ष चितवन !

वह दूर लोक की नवविभा,
पूर्ण ज्ञान मयी अन्तर्प्रभा,
जगमग जीवन का नव प्रकाश,
अद्भुत सुन्दरता का विकास,

स्नेह स्नात मधुर वातावरण,
जीवन का वह लघु प्रथम चरण,
नयनों का झुक-झुक आलिंगन,
नूतन कंचनमय प्रेमांगन,

आनन्द उल्लास की मधु रेखा,
जीवन आलोक प्रखर देखा,
आँखों की मधुर मूक हंसी,
पुलकित हर्षित उस्सास खुशी,

आहों की जलती प्यास लिए
अनुतापों का उस्सास लिए,
वह स्नेह राग को पास किए,
करती लालसा का सम्वरण,

× × ×

लहरों का लहरों से नर्तन,
खुला जैसे पूर्ण मुक्त गगन

गंगा जमुना का युग्म मिलन,
बून्दें झरती जैसे आँगन,
अवरोधो का सारा विकास,
स्नेह युक्त ज्यों क्षितिज आकाश,
मिलने आतुर व्यथित तड़पन,
हर्षित वह रे ! संतप्त जीवन।
वह स्नेह स्नात कटाक्ष चितवन ।

× × +

प्राण-प्राण का मधुर निमंत्रण,
दो हृदयों का फिर मूक मिलन,
स्वर्ण तुल्य जीवन का कण-कण,
उदीप्त प्रेममय होता मन,
नव इंगित नेत्र देता शरण,
जीवन का लघु प्रथम चरण,

× × ×

पिपासित कंठों की मधुर प्यास,
लेकर शत शत गुम्फित आश,
मिल गया हो आया प्रवास,
मिट गया क्षण क्षण का नैराश्य,
टूट जाता जीवन का पाश,
मिलता हो जैसे मुक्त दास,
कैसा वह मनो विनोद करण,

वह स्नेह स्नात कटाक्ष चितवन ।

—:०:—

तुलसी दास के प्रति

तुलसी मुक्तितुम्हारी पावन ।

लहर लहर लहराया सावन ।
तुलसी मुक्ति तुम्हारी पावन ।।

अमर प्राण तुम में बसता था,
अमर ज्योति तुम में तुलसी थी ।
नश्वर जग में पा स्थिर छाया,
मोद मना पुलकित हुलसी थी ।।

तुम में आँधी वेग छिपा था,
तुम में बिजली चमक छिपी थी ।
अधिक सांस्कृतिक प्यार छिपा था,
तुम में जीवन ज्योति छिपी थी ।।

दिवस तुम्हारा कितना भावन ।
लहर लहर लहराया सावन ।।

तुम जगती के साधक थे,
तुम जगती के आराधक थे ।
शुभ विभा की विमल ज्योति तुम,
तुम युग रथ के संचालक थे ।।

राम कथा के भक्त के भक्त अमर थे,
अमृत छवि के प्राण अजर थे ।
स्वर्गिक छवि के तेज प्रखर थे,
तुम भारत वासी सहचर थे ।।

गीत तुम्हारा कितना पावन।
लहर लहर लहराया सावन,
तुलसी मुक्ति तुम्हारी पावन।
जीवन दीपक तुम जगती के,
प्रभा पूर्ण रवि तुम संस्कृति के,
ज्योति प्रभा थे गई किरण की,
तुम थे युग प्राण लोचनों के॥
रवि किरणों का प्रखर रूप था।
चन्द्र-सुधा सा अमृत स्वरूप था।
तेरी मीठी वाणी से युग,
आत्मा का संचित कण-कण था।
आया शुक्ल सप्तमी सावन।
तुलसी मुक्ति तुम्हारी पावन॥
काव्य सुधा से दे नव जीवन,
भरा प्राण में तुमने गुंजन।
मुक्त गीत गाए जो तुमने,
टूट गए क्षण-क्षण के बंनध॥
मुक्त बने आये तुम युग में,
मुक्ति मिली तुमको जीवन में।
मुक्ति तुम्हारी कितनी पावन,
व्याप रही भारत कण-कण में॥
सप्तमी शुभ दिवस मन भावन।
तुलसी मुक्ति तुम्हारी पावन॥

———

(२) तुलसी दास के प्रति

तुलसी दाप सुनहला तेरा।
जलता बलता प्रखर-प्रखर बन ॥

जलता जाता दीपक तेरा,
बलता होता अति वह निर्मल।
देता बिखेर कैसा सौरभ,
कोमल उज्ज्वल प्रतिपल प्रतिपल ॥

है फैल रही जो ज्योति विमल,
मिटता उससे युग अंधकार।
झोंका देती आँधी जब जब,
बनती जाती अधिक साकार ॥

युग में जलती नभ में जलती,
जलती राशि गगन भूतल में।
है युग युग से जलती आयी,
आँधी सी चलती हलचल में ॥

ले वीणा अपने हाथों में,
सहलाया कोमल तारों को।
भौंह कसे तुमने गाए गीत,
भरे सांस्कृतिक युग प्यारों को ॥

गान तुम्हारा शाश्वत अति है,
स्वर्ण काल का प्राण लिए जो।

झंकृत, मर्मर तार बीन के,
युग गौरव अभिमान पिए जो ॥

हिन्दू, हिन्दी हिन्द का वह,
प्राण विधायक दीपक तेरा ।
जलता निस दिन मधुर मधुर वह,
प्रात दिवस वह रात सबेरा ॥

तेरे ग्रंथ रचित जितने हैं,
उनमें भरा भाव संस्कृति का ।
है पंक्ति पंक्ति गाथा गाती,
तेरी शाश्वत चिर प्रवृति का ॥

तुमने आलोक जगाया था,
तुमने चिर प्रभा बिछाया था ।
फैलाया था ज्योति रश्मि सा,
बना अमर युग में आया था ॥

दीपक की लौ जलती अब भी,
जलती बलती प्रबल ज्योति भर ।
गिरते जाते भूतल तल पर,
पूर्ण विभा के मोती झर झर ॥

स्नेह भरा था जो दीपक में,
वह स्नेह अजर, वह स्नेह अमर ।
जितना झरता उतना भरता
कैसा उसका प्रेम अजर ॥

पा संदेश नया फिर युग ने,
अपनी नयी ज्योति देखी वह।
माँस पेशियों में नई क्रांति
अपनी छाती तानी तब वह ॥

छाती में घाव बने कितने
घावों को सहलाया तुलसी।
सूख नहीं सकता युग-युग में
वैसा सरस पिलाया तुलसी ॥

देव लोक से वाणी लेकर,
तू युग धरती पर आया था।
जन बीच गीत सुनाकर तुमने
जीवन प्रेम गान गाया था ॥

उज्ज्वल करता भूतल का कण
प्राण विधायक दीपक तेरा
जलता बलता प्रखर-प्रखर बन
प्रात दिवस वह रात सबेरा ॥



रजनी बाला

वह शान्त साधिका रजनी।

आँसू टपकाती गाती,
पथ में आलोक बिछाती।

लेकर नेत्रों में आँसू,
हाथों को फिर फैलाए।
लघु उजले दीप जलाए,
कुछ दर्द व्यथा के गाए।

अपनी आँसू की लड़ियां,
टपकाती धीरे मग में।
अनमोल बजाती जाती,
छमछम छम अपने पग में।।

वह उज्ज्वल लघु दीपक में,
है मधुर प्रेम भर देती।
फिर मृदु कोमल हाथों से,
है नभ छाती पर धर देती।।

कुछ शाश्वत गीत सुनाती,
है रजनी बाला गाती।
दिवस ज्योति जब मिट जाती,
वह सांध्य क्षितिज पर आती।।

आँसू टपकाती गाती।
पथ में आलोक बिछाती।।

वह शांत सांधिका रजनी।

गीत

रात आयी वह न आया।

चाह जिसकी ले चली थी,
दूर नभ में दीप माला।
रात भी अब बीत आयी,
प्रात को देती उजाला॥

रात की आँखें निराली,
निर्निमेष हो थक पायीं।
आँसू बिखरी लड़ियों से,
पृथ्वी धीरे मह लायी॥

दीप शांत नील गगन का,
प्यार ओस का बरसाया।
मृदु हर सिंगार फूल से,
किसने नव पंथ बनाया॥

उड़ कल्पना छाती किसकी,
हहर-हहर पलकों में आयी ?
झरते ओस कणों में तब,
वह अपनी व्यथा सुनाई॥

रात के व्यथित क्षणों में,
प्राण किसका विकल बोला ?
मचल मर्मर तार बोला,
भींड़ का व्यवधान बोला॥

तारों के नील गगन में,
प्यार किसका टपक बोला ?
हृदय पटल से टूट टूट,
नक्षत्र किसका मचल डोला ।।

स्नेह की बत्ती बढ़ा कर,
प्रेम का दीपक जलाया ।
जान शूली पर चढ़ा कर,
प्राण की बाजी लगाया ।।

सद्यस्नात सी खड़ी यहाँ,
कौन आज धरती बाला ?
गले लिए पड़ी हुई जो ।
मुरझायी आँसू माला ।।

निठुर कैसा प्यार पाया ।
रात आयी वह न आया ।।

—:०:—

पीड़ा

चाँद भी धुंधला उधर है,
भाग्य भी धुंधला किसीका ।।

नेत्र में भी अरमान के,
अब मेघ आने न पाये ।
कौन तेरे लिए है इस,
पंथ में शूली बिछाए ?

है किस्मतों में बिलखती,
जा रही किसकी जवानी ?
आह की तड़पन छिपाए,
जा रही किसकी कहानी ?

डूबते अब आज जाते,
भाग्य के किसके सितारे ?
कसक पीड़ा में सिमटते,
चल रहे संघर्ष सारे ।।

बोझ ढोता चल रहा है,
घाव को दिल में छिपाए ।
बोलता है कुछ नहीं वह,
मूक व्यथा खुल न पाए ।।

आज चुम्बन में कसक है,
प्राण में लेकर जलन है।
इस झुलसती आंच में,
हो रहा किसका दलन है?

पंथ भी वंकिम इधर है।
चाँद भी धुंधला उधर है॥

—:०:—

तुम कौन (कृषक)

तुम कौन ज्वाल सृष्टि के प्राण !
नूतन तेरा कैसा विधान,
शत-शत फन अंगों में लिपटे,
तुम कर चुके गरल भी पान ।।

अंग अंग का ले तरल ताप,
दब गया यहाँ रे ! सृष्टि ज्वाल ।
काल मृत्यु से खेल खेलते,
बना कर रूप प्रबल विकराल ।।

काँटों की बनी हुई शय्या,
पर भरते तुम हर्षित मुस्कान ।
तुम अंगारों से खेल प्रबल,
बढ़े गाते जीवन का गान ।।

कृषक नाम तेरा चिर परिचित,
अंगों से करते अमिट दान ।
लुटा देते वेदी अंग पर,
तुम क्षणिक मातृभूमि पर प्राण ।।

मिट्टी को पीस चन्दन बना,
पीसते रहते जीवन अनन्त ।
तुम नव स्वेद कणों से अपने,
कर देते जग को रूप वंत ।।

तुम सब घोल कर देते पिला,
पृथ्वी स्वामी तुम कौन कन्त !
तुम प्राण फूंककर कर देते,
सरसित मुर्झाया चिर वसंत ॥

तुम फटे हाल पर नौनिहाल,
तुम पहन गले में लौहमाल ।
तुम देते युग का अंग अंग,
तुम नये ढंग से पूर्ण ढाल ॥

— —

धूल

जगती तेरी छाया माया।
छोटी कणिका या स्वर्ण धूल।
फैला कैसा धरती का फूल॥

धरती तुम से बनी हुई है,
है जीवन और बनी काया।
भूतल का निर्मित अंग अंग,
जगती पर फैली सब माया॥

गाँव तुम्ही से बना हुआ,
रे बना हुआ है गृहन्यारा।
यद्यपि तुम छोटी कणिका हो,
अति प्रबल है प्रभाव तुम्हारा॥

धूली का जग, धूली का तन,
है धूली निर्मित सब काया।
छाई रहती धूली में ही,
जगती तेरी छाया माया॥

पहुँचाती नहीं अरि! तू शूल।
छोटी कणिका या स्वर्ण धूल॥

——

अनन्त

तू जीवन के दीप मेरे,
तू जीवन के राग भी हो।
तू क्षितिज की ठहरी रेखा,
तू दिवस के प्रकाश भी हो।

चन्द्र की शीतल किरण तू,
चाँदनी के रूप अनुपम।
बीन के तू तार कोमल,
लोचनों के प्राण तुम हो॥

जीवन मरण के पार तू,
शाश्वत जीवन विहान तू।
सुख दुःखों के रूप तुम हो,
अनंत सागर तुम्ही हो॥

तू जगत की ज्योति निर्मल,
तू जीवन के तत्व भी हो।
युग के अमर प्राण कितने,
तू जीवन के गान भी हो॥

झिल-मिलाते दीप नभ के,
कल कल स्वन्दन लहरों के।
विभा अभा बाल अरुण के,
तू छिपे अरमान भी हो॥

सौरभ सुगंधित मकरंद,
मधुर फूल पराग तुम हो।
आत्मा की विमल ज्योतितू,
तू बलते प्रकाश भी हो ॥

तू जीवन के दीप मेरे,
तू जीवन के राग भी हो ॥

——

मैं और तू

(ईश्वर और जीव)

मैं विभा की ज्योति निर्मल,
तू विभा की नव किरण बन ।
मैं बीन का तार कोमल,
तू संगीत का स्वर बन ।।

मैं नभ का फैला आँगन,
तू उसकी नील ज्योति बन ।
मैं जीवन का मीठा स्वर,
तू उसका मधु स्पन्दन बन ।।

मैं हूँ चलती मन्दाकिनी,
तू उसका मृदु प्रवाह बन ।
मैं छाया नभ में बादल,
तू कौंधती दामिनी बन ।।

मैं राग-रागिनी कोमल,
तू झंकृत मृदुल स्वर बन
मैं हूँ मूर्तवत् स्वर्ण कण
तू स्वर्ण कलश कंचन बन ।

मैं रे ! मृदुल वृक्ष कोमल,
तू अभिनव मृदुल डाल बन ।

मैं हूँ मुख का मृदुल होठ,
तू रे ! मृदुल मुस्कान बन।

मैं सुप्त उनींदी आँखें,
तू उसका मधुर स्वप्न बन।
मैं मानव का लघु जीवन,
तू उसका नव स्पन्दन बन।।

हूँ चलता प्रवाह रे ! मैं,
तू चलती प्रवाहिनी बन।
मैं प्रभात की प्रथम पहर,
तू उसकी नई रश्मि बन।।

मैं हूँ धरती का आँगन,
तू धरती का कण-कण बन।
मैं जीवन का छोटा घट,
तू उस घट का जीवन बन।।

हूँ हृदय का देवता मैं,
तू पूरक हृदय चक्र बन।
मैं युग का जाग्रण गान,
तू युग का अमर प्राण बन।।

मैं हूँ घट की कुंडलिनी,
तू उसका उद् बोधन बन।

मैं युग का अमर साध्य,
तू लक्ष्य युक्त साधक बन ॥

मैं शारीरिक अमर प्राण,
तू उसका पंच प्राण बन ।

शून्य चक्र ब्रह्मरंध्र में,
तू सोहं का अनुभव बन ॥

—:o:—

दीप माला

क्या गाऊँ क्या दीप सजाऊँ ?

आज गरीबी इस आँगन में,
रोती मानवता बंधन में।
भूख ज्वाल की पीड़ा कैसी,
मूक पीड़ा क्रन्दन-क्रन्दन में॥

दीप तुम्हारा यह प्रकाश भी,
आज धुंधल दीख रहा है।
मानवता की करुण कहानी,
कौन श्रष्टा अब लिख रहा है॥

भूख-भूख की ज्वाला अब तो,
धरती से ऊपर उठती है।
शत शत धारा ले अंगों में,
अश्रु धार करुणा फूटती है॥

हृदय बीन क्या आज बनाऊँ।
क्या गाऊँ क्या दीप सजाऊँ ?

रोता है इतिहास जगत का,
मानवता के इस रोदन में।

मूक वेदना छिपी हुयी है,
उसके चिंतन उत्पीड़न में॥

पसीज चुकी है नभ की छाती,
भींगा धरती का है आँचल।
गीत युग का द्रवित पंकिल कर,
बहा रही मानवता आँसू जल ॥

रिक्त बना जाता मानव का,
टपक टपक कर अश्रु प्याला।
कहीं बुझादे नव प्रकाश भी,
दीप तुम्हारी जलती माला ॥

क्या गाऊँ, क्या दीप सजाऊँ ॥

—:०:—

हमारा देश

(१)

यह देश हमारा प्यारा है, नव भारतवर्ष दुलारा है ।
बड़े प्रेम से बड़े स्नेह से रे हमने इसे संवारा है ।।

खड़ा हिमालय जो सीमा पर वह उन्नत भाल हमारा ।
उज्वलधार लिये गोदी में बहती नदियों की धारा है ।।

यह मिट्टी हमको प्यारी है यह क्षितिज हमको प्यारा है ।
छू न सकेंगे इसको कोई मेरे भारत का नारा है ।।

नभ सा फैला विस्तार है जो एकता का गान हमारा है ।
लहरों पर लहराता सपना केशर का रंग हमारा है ।।

मुक्त-मुक्त हम महा मुक्त रे टूटी बन्धन की कारा है ।
अम्बर द्वीप सुनहले मेरे यह हिन्दुस्तान हमारा है ।।

——

नव-विकास

जगह जगह पर नव विकास हो ।

बैभव हो, नूतन जीवन हो,
सुख से पूरित धरती कण हो ।
शुष्क प्राण क्षण पल्लवित हो,
प्रान्त-प्रान्त में नव मधुवन हो ॥

जन-जन में फिर नया प्राण हो,
धरती ऊपर नया गान हो ।
अपना अस्तित्व उठाने को,
जागृत नया अभियान हो ॥

जगह-जगह पर नव विकास हो,
धरती ऊपर नव प्रकाश हो ।
जगमगाता युग का भाल हो,
नया जीवन नव उल्लास हो ॥

सभी जनों बामुक्त विचरण हो,
नस-नस में शक्ति संचारण हो ।
सभी एक हैं सभी भाई हैं,
चिन्तन ऐसा और मनन हो ॥

कोई नहीं यहां परतंत्र हो,
भारत हमारा गणतन्त्र हो।
ऐसा भाव सृष्टि में छाये,
सर्व सेवा ही महामन्त्र हो॥

जगह-जगह पर नव विकास हो।

——

"हिमालय से"

युग से बंदित पूज्य हिमालय,
मानवता में पौरुष भर दे।
पर्वत घाटो नद नदियों में,
धार शक्ति की संचय कर दे।

हिम से आच्छादित शृंग थिराले,
दशो दिशाएँ ललकार उठें।
भारत के बच्चे-बच्चे भी,
सब सर्प सदृश फुफकार उठें ।।

ज्वाला की तीखी लपटों में,
रे शत्रु शैन्य घुलमिल जावें।
बर्फीली शंकरीली पथ से,
विजय वाहिनी हम लहरायें ।।

बढ़े बेग से तूफानों से,
आँधी गर्जन से होड़ मचाने।
सोना ताने बढ़े चलें हम,
तोपों का रुख बदल देने ।।

हिमाछय दवानल से अपना,
मानव में बल वैभव भर दे।
बहिनशिखा अम्बर तक फैले,
पौरुष की ज्वाला से भर दे ।।

तेरे फैले चट्टानों सम,
भारत की छाती हो जावे।
गंगा की शीतल धारा से,
तू अब बड़वानल विकसादे।।

खून से लथपथ खड़ा हिमालय,
मानव में ललकार जगा दे।
शोणित की धारा से शतशत,
जीवन की ज्योति पुनः जगा दे।।

तोपों गोली बौछारों से,
युग-सीना चलनी हो जावे।
जय हिन्द जयहिन्द का नारा,
तनिक नहीं फीका पड़-पावे।।

संस्कृत प्रेरक खड़ा हिमालय,
शतशत ज्वाला फिर सुलगादे।
मर मिटने बच्चे-बच्चे को,
राष्ट्र-प्रेम का गीत सुना दे।।

कालिदास, भवभूति, बाल्मीकि,
को पुनः भारत में लौटा दे।
भारत की नव आजादी को,
गंगा से बोलगा पहुँचा दे।।

भारत मां का लाल हिमालय,
प्रहरी बन तू खड़ा अड़ा है।

भारत का रक्षक बन कर तू,
रक्त दाग मय खूब लड़ा है ॥

कफन बाँध तू अपने माथे,
भारत के हित तना खड़ा है।
पाप मिटा देती पलभर में,
गंगा की उज्वल धारा है ॥

भारत की बढ़ती टोली को,
तूने जय गान सुनाया है।
चीनी मिट्टी की बात नहीं,
नभ को भी दीप दिखाया है ॥

धरती की बात नहीं केवल,
नभ को ललकार सुनायी है।
दूर गगन में फैली चोटी,
उसमें भी प्रलय मचायी है ॥

गिरि गह्वर पर्वत आंगन से,
तू आंधी तूफान जगा दे।
रण चण्डी की रण भेरी की,
तू पगपग झंकार उठा दे ॥

खुले नेत्र फिर रोद्रशैव का,
तू फिर तांडव नृत्व मचा दे।
खच-खच करते शत्रु शैन्य को,
तू भारत में प्रलय मचा दें ॥

गहन गुफा से निकल आज फिर,
रे सोया सिंह दहाड़ उठे।
प्रबल शक्ति बल देनेवाला,
मूल उत्सों का स्रोत फूटे ॥

प्रवंत - प्रवंत शृंग - शृंग से,
तू भीषण हुँकार उठा दे।
भारत के वीर जवानों में,
आँधी गर्जन प्रलय जगा दे ॥

—:o:—

प्रेरणा

तू मुक्त देश का मानव बन

भारत माता की जागृत छबि
तू गौरवमय सत्यासब बन

दे तोड़ रूढ़ियों का बंधन
ले ललाट रोली का चन्दन
सुन जगत का कारुणिक क्रन्दन
भरदे मुस्कान किरण रवि वन

भूख प्यास की ज्वाल बुझा कर
पिछड़ी मानवता को लाकर

भेद-भाव का द्वन्द्व मिटाकर
जर्जर प्राणों में भर जीवन

दृढ़ प्राण हाथों में लेकर,
प्राण मातृ वेदी पर धरकर,

जन-जन को सहचर कर
दे मृत प्राणी को संजीवन

सूखी सी ठठरी पनपा कर,
व्यक्ति-व्यक्ति की भूख निटाकर

जन-जन में कल्याण जगा कर
कर दे कंचन साम्प्रति कण-कण

ध्वंस-शेष को संचित कर,
गृह-गृह को पुलकित सरसित कर,

नीरस-शुष्क को अमृत तर कर
कर दे निर्मित नवराज भवन।

नई-शिक्षा का दीप जला कर,
सहचरता का भाव जगा कर,

सबको अपना भ्रातृ बनाकर,
दे दे अपना तू तन-मन-धन
मुक्त देश के मुक्त प्राणी बन।

—:o:—

हिमालय पर उन्हें चढ़ा दे

ओ मानवते मुक्त कंठ से,
अमर गान तू अपना गा दे।
मूक बनी युग की वाणी में,
तू चिर नया प्राण सरसा दे।

आह लिये भर रही सिसक जो,
उस कुटिया में प्राण जगा दे।
अपने बल से, अपने श्रम से,
सृष्टि का अंधकार भगा दे।

तेरा संगी पिछड़ गया जो,
उसको आगे आज बढ़ा दे।
पैरों में तू नयी शक्ति भर,
हिमालय पर उसे चढ़ा दे।

दिनकर, हिमकर की किरणों सा,
जग में अब तू प्रभा बिछा दे।
फूस-फास चिथरों से बंधी,
कुटिया को तू महल बना दे।

छाये धरती की छाती पर,
गावों को अब नगर बना दे।
रे! टूटी-फूटी पगडंडी जो,
ठोक-ठाक तू डगर बना दे।

भारत माता का जो ऋणि तू,
इसके हित तू प्राण लगा दे।
देश कार्य में मर मिटने को,
जगती का त्योहार बना दे।

ओ मानवते मुक्त कंठ से,
अमर गान तू अपना गा दे।

———

शक्ति दायिनी दुर्गे

जन-जन के नस-नस में मां तू,
प्रबल शक्ति का स्रोत जगा दे।
फूँक आज दे शंखनाद को,
मानव मन को सबल बना दे।

विश्व कांप जाता पल भर में,
शक्ति हमारी जब जगती है।
कण-कण डोल पड़ा धरती का,
तांडव की कुछ अद्भुत गति है।

शक्तिमयी ओ! प्राण-दायिनी,
जग में अह्वान तुम्हारा है।
लौटा लेना है अपना जो,
युग से कैलाश हमारा है।

———

संकेत

तुम बढ़े चलो, बढ़े चलो।

तूफान सी इस जिन्दगी में
चट्टान सदृश बने चलो।
झुको न कभी रुको न कभी
तुम अथक प्राण तने चलो।

तुम बढ़े चलो, बढ़े चलो।

गौरव को तुम साथ लिए
माँ वेदी पर प्राण दिए।
जीवन मंजिल के पथ पर

तुम बढ़े चलो, बढ़े चलो।

तुम मूर्त्तमय जीवट प्राण
मनु की तुम वीर संतान।
स्वर्ग लोक के अमर दान
स्वेद कणों में सने चलो।

तुम बढ़े चलो, बढ़े चलो।

आंधी के भीषण गर्जन में
विष तुल्य सर्प-दंशन में

जोवन प्रलय संघर्षंण में
झंझा से तुम लड़े चलो।

तु्म बढ़े चलों, बढ़े चलो।

सोचो न तु्म हो एकाकी,
धरे यहाँ कारज बाकी।
दिखा अरे जीवन झांकी
एक ला चलो, एक ला चलो

तुम बढ़े चलो, बढ़े चलो।

—:०:—

जागरण

जागरण गीत तुम गाओ।

गाढ़ी नींद में तुम सोये हो।
अपनी शोभा पै खोये हो।
निद्रा को तुम दूर भगाओ।
जागरण तुम गीत गाओ।

फूंक शंख जीवन का अपना,
निर्मित कर नव स्वर्णिम सपना,
रच भूतल पर नई कल्पना,
अग्नि-ज्वाल से तुम तप जाओ,
जागरण गीत तुम गाओ।

अपने घर को स्वर्ग बना दो।
आंगन में नवज्योति जगा दो,
तम को घर से दूर भगा दो।
धरा ऊपर अमृत बरसाओ।
जागरण गीत तुम गाओ ;

बाल - वृद्ध साक्षर सब हो ले,
ज्ञान जलद से मानस धो ले,
श्रम से कुंठित जीवन खो ले,
अरे ! शत्-ज्ञान दीप जलाओ,
जागरण गीत तुम गाओ।

——

गूंज उठे धरती, आसमान

नई जिन्दगी, उतरी धरती,
जागो किसान, जागो किसान।
भरने निमित्त धरा धाम पर,
अमृतमय कंचन नूतन प्राण।

भूल जाओ अब तू निद्रा को,
रे! पास न आने दो आलस।
जागो तू नई शक्ति लेकर,
करो जग में नित्य नया काम।

कर भस्म जग द्वेष ताप-शाप,
पुनः जग में सर्प सा फुफकार।
विचलित न हो निज पंथ से,
मिटा जग का सर्व अंधकार।

झन्-झन् बोल उठे सारे तब,
तेरे मस्तिष्क के तार-तार।
रच दे अपने बल से तू,
फिर नई सृष्टि, नया संसार।

तू तोड़-फोड़ दे ठोकर से,
बंधा बंधन से जो समाज।
तेरे ही आँखों के आगे,
फैले गाँधी का राम राज्य।

भाई - भाई का प्रेम बढ़े,
ले सबका संचित छिपा प्यार।
नव-युग सेवा से हो प्रेरित,
फिर बहे यहां पर स्नेह धार।

राष्ट्र देश के सचमुच किसान,
तू मानवता के हृदय प्राण।
गाओ और करो कुछ ऐसा,
गूंज उठे धरती आसमान।

—:०:—

नये गीत

जग में नये गीती तू गा दे।

आपस में तू प्रेम बढ़ा दे
सभी देश को शीश चढ़ा दे
भूले हुए को राह बता दे
नई रोशनी तू छिटका दे।

जग में नये गीत तू गा दे।

सभी सामने आंख बिछा दे
तिरष्कृत को निजी बतला दे
नई जिन्दगी, नई उमंगें
वसुधा पर तू अब फैला दे,

जग में नये गीत तू गा दे।

खेतों में मोती बरसा दे,
दुखियों का सभी दुःख भगा दे,
सभी जनों को क्षण हरसा दे,
धरती ऊपर तारे ला दे।

जग में नये गीत तू गा दे।

गाँव-गाँव को स्वच्छ बना दे,
ग्राम - धर्म सबको बतला दे,
प्रेम भाव का पाठ पढ़ा दे,
अपना सभी कर्त्तव्य जता दे।

जग में नये गीत तू गा दे।

क्रान्ति

कैसी है यह नई क्रांति ?
सोया जीवन है गया जाग,
तम गृह का है सब गया भाग,
ले रही धरती अंगड़ाई,
किसने फिर नव मांग सजाई ।

नई चेतना, नई उमंगे,
नई भावना, नई तरंगें,
नया लक्ष्य है, नया गाव है,
नव जीवन है, नया प्राण है,
नई आशा है, नव विकास है,
नया पंथ है, नई राह है,
नया ढंग है, नया राग है,
नया-नया युग का स्वरूप है ।

ठूह - ठूह से जगी क्रांति,
कैसी है यह नई क्रांति ?
पशुता का भी शेष हुआ है,
नया देश का भेष हुआ है,
जगह-जगह उत्थान मचा है,
नई सृष्टि नव स्वांग रचा है,
जगी नियति का भाल सजा है,

प्रेम मयी भैरवी बजी है,
कैसा यह उन्माद नया है,
ग्रामों का विकास छाया है ।

छिटक रही नव-रश्मि क्रांति,
कैसी है यह नई क्रांति ?

—:o:—

सृजना-गान

धरती की मिट्टी से निर्मित,
शत्-शत् दीप हम पुनः जलावें,
धरती गूंजे, नभ भी गुंजे,
ऐसा गीत सृजन का गायें।

बिखरी संस्कृति जो गांवों की
उसे शक्तिमय पुनः बना दे
फूंक प्राण मृयमाण जनों में
भाई बनकर गले लगाएं।

नव विकास पंथी बन कर हम
गाँ-गाँव में नव प्यार भरें
रिक्त प्राय पूर्ण भूखंड जो
रे ! बहु उपजों से धन्य करें।

भरे प्राण ग्राम जनों, में अब
उन्नत पथ पर उन्हें लावें
राह दिखाकर, पंथ बताकर
अपना अस्तित्व उन्हें बतावें।

ऐसा गीत सृजन का गावें।

———

गूंजा कैसा शंख-नाद

आन्दोलित हो गई ध्वनि ।
नभ युग आंगन क्षितिज पार ।।

सुन रहा प्रबल हुँकार ।
भीषण गंडीव टंकार ।।

हुआ अरे फिर चलय मान ।
जो यहा पर था मृत प्राण ।।

सूखे नद में जल अपार ।
बहता लेकर नये गान ।।

कैसा यह भैरव संवाद ।
गूंजा कैसा शंख नाद ।।

नव करुणधार उमड़चली ।
तोड़ - फोड़ बंधन कगार ।।

उस धार में चलाक्षणिक ।
बह देव तेरा संसार ।।

सरसित मुर्झाया वसंत ।
डाल - डाल ले नया फूल ।

मखमल सा हो पड़ा क्षणिक ।
जो पहले था बना शूल ।।

मनुज छाती पसीज गई।
लेकर सबका तुच्छ प्यार ॥

बसा सबके फिर हृदय में।
यह तिरस्कृत चिर संसार ॥

लिपटे - चिपटे चिथड़ों पर।
वही अबिरल आँसू - धार ॥

भरा फिर सबके हृदय में।
विश्वबंधु का सरल प्यार ॥

गूंजा कैसा शंख - दान।

—:०:—

चेतना (जागृति)

हिमाचल से उठी पुकार ।
करो मातृ - भूमि कल्याण ।।
अंधकार दूर भगाओ ।
करो सभी को अमर दान ।।

निर्धन की रोती कुटिया ।
में भर दो तुम नए प्राण ।।
तुम देश - देश के सेवक ।
करो सृजन भीड़ में जान ।।

ज्वाला को शीतल कर तू ।
रे बरसाओ अमृत बिन्दु ।।
उन चरणों के स्पर्शों से ।
लहराए शत सप्त सिन्धु ।।

गृह - प्रांगण में छा जावे ।
जीवन की कुछ गजब ज्योति ।।
तुम सृजित कर दे यहां पर ।
रे ! प्राण-मयी प्रबल स्फूर्ति ।।

तेरे चरण नखों से नव ।
आवे कण-कण में स्पन्दन ।।
भूतल नभ आंगन करता ।
युग गोदी में अभिनन्दन ।।

मनु पुत्र मानव संतान ।
है तुम में जागृत - शक्ति ।।
अंग - अंग से करो अरे ।
मातृभूमि की सरल भक्ति ।।

सुप्त जनों में फूंक - प्राण ।
करो सभी को अमर दान ।।

—:०:—

नव-विहान

जग उठी जान, जग गए प्राण।
जग पड़ा नीला आसमान॥
चमका फिर नभ में आसमान।
किसने छेड़ा नवल गान॥

जग गया पल्लव सुप्त अजान।
जग उठी मानवता मृय मान॥
रे ! गूंज उठा सारा जहान।
गूंजा कैसा मृदुल तान।
कैसा रे ! यह नव विहान॥

प्राची में निकला रश्मियान।
बढ़ चला दूर उसका प्रयाण।
देकर हाथों से मुक्त दान।
वह करता गर्वित शुष्क - प्राण।
कैसा रे ! यह नव विहान ?

जागा धरती का अंग - अंग।
चली मानवता सब एक संग।
छूट चला जैसे हो निषंग।
गंगा यमुना में नई धार।

उमड़ा किसका रे नवल प्यार।
होता जागृत नया संसार।
दे कंध भार, दे नया ज्ञान।
कैसा रे! यह नव विहान?॥

मिल गई अमरता आज पास।
युग जड़ता का हुआ चिर ह्रास।
है नया गंध है नया वास।

मिल गये सबको नये गान।
कैसा रे! यह नव विहान?

—:०:—

संगठन

मैं दो - टूक हृदय का मिलन,
संसार लिए चलता हूँ।
मैं बिखरे नव फूलों का,
मधु बहार लिए चलता हूँ॥

मैं सौरभ का चिर पुलकित,
अभिमान लिए चलता हूँ।
मैं सोयी मनवता का,
अन्तः प्राण लिए चलता हूँ॥

मैं भूतल की गोदी में,
निर्माण लिये चलता हूँ।
जीवन बन जग प्रांगण में,
चिर सृजन लिए चलता हूँ॥

मैं देश भक्त सेवी की,
विजय - भाल ले चलता हूँ।
मैं दो टूक - हृदय का लघु,
संसार लिए चलता हूँ॥

धूलि धूसरित छाया में,
दिन भान लिए चलता हूँ।
नये राष्ट्र नव विकास का,
में, प्राण लिए चलता हूँ।

मैं नव - युग, नई देन का,
व्यवहार लिए चलता हूँ।
भारत माता का संचित,
मैं प्यार लिए चलता हूँ॥

मैं रौद्र के उन्मेष सा,
नव प्राण लिए चलता हूँ।
सेवा में बुझे दीप का,
रे। प्राण लिए चलता हूँ।

पत्थर - सूखी छाती में,
जलधार लिए चलता हूँ।
मैं दो टूक - हृदय का मिलन,
संसार लिए चलता हूँ॥

—:०:—

जन सेवक

जनता तेरा संगी साथी,
है जनता तेरा अमर प्राण।
जनता की सेवा को लेकर,
चल पड़े तेरा अभियान ।।

चंचल लहरों की धारों पर,
करो स्वच्छन्द नौका बिहार।
तेरी सेवा लेकर युग में,
यह स्वर्ग तुल्य बने संसार ।।

नूतन विहान के भासवान,
जर्जर भारत के नये प्राण।

जनता के हित जनता के मित,
जनता में तुम लाओ विकास।
भर दो तुम युग के कण-कण में,
दिनकर का जो है नव प्रकाश ।।

तेरी सेवा से जाग उटे,
सारी धरती आंगन प्रदेश।
तुम बढ़े चलो जीवन पथपर,
ले नया ढंग नया संदेश।

दे दो तुम युग को अमरदान।
जर्जर भारत के नये प्राण ।।

रे स्वास्थ्य, शिक्षा और कृषि में,
ला दो अमर नया परिवर्तन।
स्वर्णमयी धूलि को कर दो,
नूतन कंचन स्वर्गिक चंदन ॥

पिछड़ी जाति वर्ग सेवा में,
लगा अरे! अपना तू तन-मन।
बन जाओ भारत माता के,
चिर संचित जीवन दायक धन ॥

जाग पड़े जाति जो मृय माण।
जर्जर भारत के नये प्राण ॥

— —

विस्तार गान

हम राष्ट्रीय प्रसार करें।
गाँवों का विस्तार करें ।।

गाँव अरे मेरी सम्पत्ति,
गाँव हमारा साधन है ।।

गाँव हमारा साध्य यहाँ,
यही अरे अभिवादन है ।।

जनता सुख गांव-गांव में,
गांवों को अब प्राण मिले ।।

मुरझाऐ कुसुम राह - राह,
मिहनत से अब नित्य खिलें ।।

भरे संस्कृति प्यार उनमें,
आपस में अब प्रेम बढ़े ।।

उन्नत पथ विस्तार क्षेत्र,
गांव हमारे आज बढ़ें ।।

ग्राम गीत बधुएं गाएँ,
खुशी-खुशी में दीप सजे ।।

भाई-भाई का प्रेम बढ़े,
प्रेम वाद्य अब वहां बजे ।।

लोक गान फिर जागे उठे,
तिमिर घरों से भाग उठे ॥

खुशी-खुशी के नये गान,
नई सृष्टि नव तान उठे ॥

दुखियों में संचार करें,
हम राष्ट्रीय प्रसार करें ॥

परम्परा के जाल टूटे,
रे रूढ़ियों का नाश हो ॥

आज हमारे गांवों में,
हँसी खुशी का वास हो ॥

यातायात का मार्ग हो,
गांवों में नव पंथ बने ॥

नये बीज उन खेतों में,
खेत हमारे सघन बनें ॥

गांवों से प्रेरित जनता,
जग में निज मार्ग बना दे ॥

भारत की आत्मा गांवों,
में सचमुच अब जतला दे ॥

प्रेम बढ़ा निम्न वर्ग से,
वह जीवन राह बता दे ॥

कायम कर वह पंचायत,
लोगों को न्याय दिखा दे ॥

न्याय सूत्र इससे उपजे,
रामराज्य का स्वप्न बनें ॥

ग्राम-धर्म घनी छांह में,
हैं ग्राम वृक्ष सघन तनें ॥

सभी जनों को प्यार करें,
हम राष्ट्रीय प्रसार करें ॥

रे ! शिक्षा का नया प्रसार,
गाँव-गाँव में अब फैले ॥

भेद-भाव मिट जावे अब,
धर्म भाव तनिक न मैले ॥

दूसरों के सुख से सुखी,
सर्वोदय का भाव बढ़े ॥

पीड़ित दुःखी कंगाल जो,
उच्च नीच सभी एक बनें ॥

केन्द्रों से शिक्षा पायें,
गाँवों में विभा विछायें ॥

सूखी धरती पर फिर से,
फूलों की माला छाये ॥

गाँव हमारे रोग मुक्त,
सफाई का प्रचार बढ़े ॥

ग्राम लोग हिल मिल जाये,
सब गाँवों को स्वच्छ करें ॥

नई - नई सड़कों से अब,
सारी बसुधा पट जावे ॥

नूतन बिहान ग्रामों का,
दूर कुहासा फट जावे ॥

मधुर - अमृत व्यापार करें,
हम राष्ट्रीय प्रसार करें ॥

जगह-जगह पर स्वच्छ कुएँ,
गांव-गांव में अधिक बनें ॥

मनोरंजन प्रेरित वहाँ,
मंगल रोज लगे होने ॥

आहर, पाईन, कूप, नल,
गांव-गांव में छा जावे ॥

राष्ट्रीय विस्तार होवे,
ऐसा गान सभी गायें ॥

पुल और पुलियों से यहाँ,
अवागमन का मार्ग हो ॥

सर्वोदय का पंथ बने,
लोक-सेवा सन्मार्ग हो ॥

सोयी जनता जाग उठे,
समाज-सदन का भाव छे ॥

विकसित होवे उमड़-उमड़,
नई चेतव प्रवाह ले ॥

जाग्रत जनता रच डाले,
सब जगह पाठशालाएँ ॥

दूर दूर गाँव गाँव में
नव मालाएँ लहराएँ ॥

तनिक न हाहाकार करें,
हम राष्ट्रीय प्रसार करें ॥

भारत हमारा कृषि देश,
अब खेती का विस्तार हो ॥

मिले रसायन खेतों को,
उन्नत ढंग व्यवहार हो ॥

हरी खाद कम्पोस्टीं से,
धारा उर्वर हो जावे ॥

नये तरीके खेती के,
सभी कृषकगण अपनावें ॥

जापानी ढंगों से फिर,
धान फसल का हो जावे ॥

हँसी - खुशी जग में छाये,
दर्द सभी का मिट जावे ॥

धन वन - सम्पत्ति से पूरी,
होवे यह सारी धरती ॥

री हरी - हरी घासों में,
गौवें क्यों नहीं चरतीं ?

सूखे बालों को लेकर,
धरती जरा नहीं रोवें ॥

यौवन काल मेरे कृषक,
कृषता भार नहीं ढोवें ॥

जन सुख को आधार करें,
हम राष्ट्रीय प्रसार करें ॥

पशुधन सबसे बड़ाधन है,
ऐसा ही अभिमान करे ॥

जर्जर जो पशु हैं मेरे,
उनका हम उद्धार करें ॥

प्रचलित रोग सभी पशु में,
रे ! उनका शीघ्र नाश हो ॥

शत-शत बिखरी किरणों से,
यहां पर नया प्रकाश हो ॥

नये - नये ढंगों से अब,
हो नस्लों का अति सुधार ॥

गौवों के पेय दुग्ध से,
बहे धरा पर दुग्ध धार ॥

अच्छे पुष्ट बैल से रे,
होवे धरती पर खेती ॥

भींगे कण-कण जगह-जगह
उपजे धरती पर मोती ॥

पशुधन से हम प्यार करें।
हम राष्ट्रीय प्रसार करें ॥

—:०:—

वीर सेनानी

वीर सेनानी कर्म भूमि में,
तुमको तो अब चलना होगा।

उच्च हिमालय की चोटी पर,
तुमको तो अब चढ़ना होगा।

तोपों के भीषण गर्जन में,
तलवारों की झंकारों में।

बिजली की चंचल चमकों में,
ज्वाला की जलती लपटों में।

तुमको तो अब बढ़ना होगा,
वीर सेनानी ....।

ज्ञान दीप से दूर मनुजता,
व्याकुल आज यहां रोती है।

अपनी गाथाओं को क्षण-क्षण,
अपने आंसू से धोती है।

नई सृष्टि का नया पंख तो,
तुमको अब फिर गढ़ना होगा!

वीर सेनानी कर्म भूमि में ...

झंझा के झन् - झन् झोकों में,
गफलत से खोये मोकों में।

हार मृत्यु भीषण शोकों में,
बंधे बंधाए रोकों में।

डेग - डेग पर चलना होगा,
वीर सेनानी कर्म भूमि में।

तुमको तो अब चलना होगा ॥

—:o:—

ग्राम शान्ति

ग्राम शान्ति युग में छावें,
देश गीत बच्चे सब गावें।
निर्मित कर नया-रूप कुछ,
सूखी डाली पनपावें॥

फूट स्रोत जीवन का शत-शत
अंग-अंग सरसित हो जावें।
फैल लघु तन्तु जीवन का,
युग में फिर विस्तृत हो जावें॥

रात्रि-तम दूर हो जावे,
नई किरण भूपर छावे।
शान्ति लोक में पुलकित हो,
पक्षी कंचित गात सुनावें॥

बन्धु-भाव से प्रेरित होकर —
एक अन्य को गले लगावें।
देख देव सारी रचना,
स्वर्ग से फूल बरसावें॥

क्लेश दुःख भाग खड़े हो,
रे। शान्ति मार्ग बन जावे।
भारत माता ग्राम मयी जो,
मुदित मंगल मय हो जावे॥

—:०:—

विकास-पर्व

यह विकास पर्व कैसा है ?

मानव उत्सुक हैं जिसमें,
है उत्सुक जनता सारी।
हंस रही नया रूप ले,
जग सूखी क्यारी-क्यारी ॥

उमड़ रही भीड़ लक्ष की,
उत्सव पर्व मनाने को।
युग ढांचा निर्मित कर,
अपना गीत सुनाने को ॥

जगी चेतना जगी शक्ति,
फिर भूपर अब उतरी है।
करना विकास लक्ष्य बना,
कैसी यह शुभ घड़ी है ॥

एक - एक से मिल जाने की,
धुन सभी में आई है।
गांवों को निर्मित करने,
नशा सभी में छाई है ॥

संग लिये सभी जनों को,
अपना आज बनाना है।

(९९)

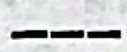
मौन दिशायें बोल उठीं,
नयी समा रंग बना है ॥

जीवन का नव विकास है,
युग फैला नव प्रकाश है।
ओ नई रश्मि से पूरित,
विस्तृत नवाकाश है ॥

जगी मनुष्यता की प्रभा,
दीख रही जग में अब तो।
सभो परम्परा डोल उठो,
जग गई रात तब तो ॥

विकास पर्व में सम्मिलित,
नव आशाएँ लहराती।
उत्सव पर्व मनाने को,
नियति स्वयं माँग सजाती ॥

यह विकास पर्व कैसा है?



युवक संघ

नया भाग्य भारत का चमके,
नयी रोशनी जग में छाये।
गाँव - गाँव में नयी मंडली,
युवक संघ भी बन ज.वें ॥

कल्याण मयो रेखाओं - से,
भाग्य रेखा युग का गुम्फित हो।
युवक संघ ही फिर साध्य बने,
नव जोवन यौवन स्फुरित हो ॥

बिकसित होवे गाँव - गाँव में,
नई सभ्यता की किरणें।
फैले विकास के नया पंख,
से ज्योतिर्मय शत-शत किरणें ॥

हो गांव वहाँ पर संगठित,
बिखरो - बिखरी सारो बातें।
इसके ही माध्यम से आवे,
दूध मयो चाँदो सी रातें ॥

पूर्ण साध्य उनको मिल पाये,
पूर्ण चेतना उनमें आये।
युवक - युवक में रे प्रेम बढ़े,
ये नये संघ में मिल जावे ॥

सब रंध्र बोन के खुल जावे,
बिकसित पल्लव [illegible] त्य फूटे।
युवक संघ से होकर प्रेरित,
विकसित पल्लव नित्य फूटे ॥

—:o:—

चिदम्बर

तुम जन - जन में तूफान भरो ।
धरती कण - कण में प्राण भरो ।।
स्वर्ग कक्ष धरती पर लादो ।
जागृत मन का उपचार करो ।।

झांक रहा जो महाकाल है ।
उसे हटादो धरती तल से ।।
अंधकार को दूर भगा दो ।
जीवन पलसे शंकितमन से ।।

अधिक गरीबी जो फैली है ।
कर्मठता का भाव जगा दो ।।
व्यक्ति व्यक्ति को अजर शक्ति दो ।
निस्वार्थ-भावसे सिंचित कर दो ।।

सोयी मिट्टी फिर जाग उठे ।
सब कृषक वर्ग भी जाग उठे ।।
त्याग तपस्या की धरती जो ।
अति शक्ति ले हुंकार उठे ।।

—:o:—

महाकाल

ऐसा एक तूफान मचा दो।
जग में तांडव नृत्य मचा दो॥

अंधकार के बादल सारे।
क्षितिज - छोर से भाग खड़े हों॥

मातृभूमि को लाज बचाने।
व्यक्ति - व्यक्ति प्रहरी बने हों॥

टूटे पर झुके नहीं जो नर।
ऐसा सबमें विश्वास जगा दो॥

द्वेष गरीबी कायरता को।
धरती तल से दूर भगा दो॥

बलिदानों की धरती अपनी।
फूँक शंख तू उसे उठा दो॥

शत - शत किरणों से भूषित।
उत्प्रेरित कर जागृत कर दो॥

भटके जन जो अंधकार में।
उन्नत पथ पर उसको धर दो॥

जग में तांडव नृत्य मचा दो॥

—:o:—

अंधकार

यह कैसा अंधकार भीषण।
छा रहा जीवन के क्षण पर ।।
है भयभीत मानवता आज।
त्रस्त सभी जन भू के ऊपर ।।

नहीं सुरक्षित कोई मानव।
अपने को अनुभव करता है ।।
भूख - भूख की ज्वाला से वह।
अधिक कष्ट जग में सहता है ।।

ज्वाला कैसी फैल रही है।
व्याप्त सभी का जन जीवन हैं ।।
शांति कहाँ ओ जगती तलसे।
पल - पल में रोदन क्रंदन है ।।

स्वार्थं वाद की आंधी बहती।
मानव मन विचलित होता है ।।
झंझा गतिरोध उठा देती।
शुद्ध हृदय कलुषित होता है ।।

व्यक्ति - व्यक्ति पर विश्वास नहीं।
जीवन सूना सा लगता है।
पग-ध्वनि किसी दानव की क्या।
कौन पाँव धीरे रखता है ।।

—:०:—

अप्रितम-कल्पना

अयि कल्पने उतर धरती पर,
तू नूतन सौंदर्य बिछा दे।
फैल रहा जो अंधकार है,
उसको पल में दूर भगा दे ।।

शक्ति-शौर्य नस-नस में भर दे,
मानवता को राह दिखा दे।
अंचल को भर रश्मि - किरण से,
अपने पंखों को फैला दे ।।

ऐसा भाव जगा दे मन में,
जीवन से कलुषित द्वेष हटे।
शुभ्र - ज्योति फैले आंगन में,
नव-विहान का नव-पल फटे ।।

संस्कृति धूमिल पड़ी जो आज,
उसका स्वरूप फिर दमक उठे।
गौरव गाथा से पुलकित हो,
भारत जन - जन चमक उठे ।।

—:o:—

तुम कौन परी नभ से उतरी

आँखों में नव मधुमास लिए,
अंगों में भाव विकास लिए।

तुम कौन... ...

होठों पर हंसती मधुर हंसी,
किसलय में नई कली विकसी।

तुम कौन... ...

पाटल जूही सी कोमलता,
गंधों से भरी मृदुल लता।

तुम कौन... ...

नूपुर पायल झंकार लिए,
देने को विस्तृत प्यार हिये।

तुम कौन... ...

कंठो में कोमल गीतभरा,
तुम सचमुच हो स्वर्गिक अप्सरा।

तुम कौन... ...

—o—

सुधा-वर्षिणी

तुम मोहक बन धरती ऊपर,
क्यों उतर पड़ी, क्यों उतर पड़ी।
तेरी उन्मत अंगड़ाई से,
सृष्टि में अंगड़ाई आयी।
यौवन की शत नई रश्मियाँ,
फूलों सी धीरे झर पायीं॥

तुम मोहक बन धरती .

मादक लहरें उन्मत धारा,
जग में इधर - उधर फिर छाईं।
फैल उठी धरती कण - कण में,
नूतन यौवन की तरुणाई॥

तुम मोहक बन धरती ..

धरती के ऊपर आयी तू,
हर्षित पुलकित झंकार लिए।
देने फिर प्रेम लुटाने को,
जीवन मधुमय अनुराग लिए॥

तुम मोहक बन धरती...

—:०: –

मादक खुशबू

गंधभरा मादक खुशबू से,
प्रिय रूप तुम्हारा देख लिया।

वह मधु की छाया देख लिया,
ज्योति की रेखा देख लिया,
उन्मत यौवन में देख लिया।

प्रिय रूप तुम्हारा देख लिया... ... ...

भावों का उपवन देख लिया,
जीवन की बगिया देख लिया,
बादल सम अलकें देख लिया।

प्रिय रूप तुम्हारा देख लिया .. ..

चंचल नयनों को देख लिया,
लहरों का विछलन देख लिया।

प्रिय रूप तुम्हारा देख लिया... ... ...

–:o:–

स्वर्णिम ज्योति से तू भर दे

मेरे जीवन का लघु आंगन,
चमक उठे फिर जीवन कण-कण।
उज्ज्वल होकर उसका प्रांगण।
स्वर्णिम ज्योति से तू भर दे।

मंगल मय संदेश सुनाकर,
नयी अद्भुत रचना तू कर दे।
आशाओं का बाग सजा दे।
स्वर्णिम ज्योति... ...

माता के प्रति प्रेम हृदय में,
नम्र भावना इस सविनय में।
अपना नाम अमर तू कर दे।
स्वर्णिम ज्योति... ...

गुंजित स्वरों में भर प्रकम्पन।
झंकृत तार-तार तू कर दे।
मूक व्यथा पीड़ा तू हर दे।
स्वर्णिम ज्योति .. ...

—:०:—

पग - ध्वनि

रून झुन पग ध्वनि सुनाओं।

डाल - डाल में अगनित आशा।
चातक कंठ है अति प्यासा।
डाली में परिमल विकसाओ।

रून झुन... ...

पीपल की हरी भरी डाली।
छिपती जिसमें कोयल काली।
झूम उठी सब डाली - डाली।

रून झुन... ...

फूलों की विकसित कलियों पर।
अलियों का फिर झुण्ड बुलाओं।

रून झुन... ...

—:०:—

नव-मुस्कान

तुम भर दो एक नया मुस्कान।
तुम गादो फिर नया एक गान।

तेरी रस भरी चितदन में,
मधु वसन्त की मधुर लहरियाँ।
फुनगी ऊपर खिली हुई है,
मादक यौवन उन्मत कलियाँ।

तुम भर दो... ...

जीवन के उत्ताप हमारे,
तेरी वाणी से मिट जाते।
उन सुन्दर लोल कपोलों से,
सुधा विन्दु हैं झरझर जाते।।

तुम भर दो... ...

रंग भरी तेरी मादकता,
जीवन में प्राण अरे भर देती।
उमड़ - घूमड़ बादल के रूप,
धुआँ - धार गोदी में देती।।

तुम भर दो... ...

——

तुम कौन कली मुस्कान लिए

तुम कौन कलो मुस्कान लिए,
खिल रही गुलाबी डाल पर।

तुम जुगनू साथ लिए धरती,
ऊपर नित दमका करती हो।
छायी घटा निराली जग में,
बिजली सम चमका करती हो॥

तुम कौन कली मुस्कान लिए,
खिल रही गुलाबी डाल पर।

तेरी नई ज्योनि के आगे;
फीके नभ के चांद सितारे।
अरूण तुम्हारे उन होठों पर,
मादक मदिरा जगने बारे॥

तुम कौन कली मुस्कान लिए,
खिल रही गुलाबी डाल पर।

सौन्दर्य राशि अनुपम शोभा,
खिल रही है उन गालों पर।
वैभव का साम्राज्य बसा है,
उन गोरे-गोरे गालों पर॥

तुम कौन कली मुस्कान लिए,
खिल रही गुलाबी डाल पर।

—:o:—

भ्रमर मस्त पवन संग गाता

डाल डाल में प्राण नया है,
जग में मधुवन छाया है।

झूम रही डालें मदमाती,
कोयल फुनगी से है गाती।
मीठी बोली से वह जग में,
मधुमय सरस अमृत टपकाती॥

खिला पलाश लिए छवि अपना,
रंगित डालों पर मुस्काता।
कुसमित पल्लव शुष्क डाल में,
भ्रमर मस्त पवन संग गाता॥

डाल डाल में प्राण नया है,
जग में मधुवन छाया है।

महुए की मीठी गमकों से,
जग का आँगन मीठा होता।
सिक्त लिए जाता अग जग को,
किस मधुवन का रे नव सोता॥

नये - नये कुसमित पल्लव से,
शोभ रही महुए की डाली।
छलक रही वसुधा के ऊपर,
मंजरी रस से भरी प्याली॥

डाल डाल में प्राण नया है,
जग में मधुवन छाया है।

वन कुसुमों में मधुवन छाया,
प्राण - प्राण में मधुवन आया।
किसने जग की इस गोदी में,
मधुवन का नव - रास रचाया॥

अग भी मीठा जग भी मीठा,
लगती मीठी वसुधा सारी।
विहस रही प्राण में रसभर,
जगकी सूखी क्यारी - क्यारी॥

मधु पराग उपर भीतर से,
भ्रमर मस्त पवन संग गाता।

डाल - डाल में प्राण नया है,
जग में मधुवन छाया है।

वसन्त

फूलों का कैसा नव कपोल,
लहराता है उपवन कानन।
नयें - नये कितने फूलों से,
कुसमित नव वासंतिक आंगन।।
कहीं लाल फूलों की डाली,
झूम रही है नव आंगन।
पवन पंख पर चढ़ कर कुसमित,
मधु गंध झूम रहा है प्रांगण।।
कैसा नव वसंत का वैभव,
झूम - झूम जाता डालों पर।
पोला पराग छाया कैसा है,
कुसमित उपवन के गालों पर।।
खोल मुक्त पंख गगनांगन,
उतरा वसंत नव गृह प्रांगण।
खिल रहे कुछ स्पर्श मात्र से,
कुम्हलाए मुरझाये उपवन।।
डाल - डाल में आए किसलय,
लाल - लाल पीले नव बन - बन।
शोभ रहा है इस वसंत में,
धूली धूसरित पृथ्वी कण - कण।।
पीलीं साड़ी का नील - वदन,
है शोभ रही उसकी सिकुड़न।
सजे सजाए फूलों के हैं,
बेल बूटे के कैसे अंकन।।

—:o:—

वसंत-आगमन

मधु अंगों में लेकर गुंजन।
उतरा वसंत है नव आंगन ॥

है पीली वासंतिक साडी,
जिसमें अनार जूही शाटल।
विविध रँग ले रंग अंग को,
चमकाते उजले अरुणादल ॥

कुंचित रेखा भ्रमर जाल की,
टपकाती शौरभ पराग दल।
पी वसंत की नव मादकता,
निर्बल पीक गाती सम्बल ॥

है कूक रही कोयल डाल-डाल,
ध्वंस फूस-फास उतुंग महल।
उड़ रहे भृंग कुसुम कानन,
कर कुंचित पंख अपन सरल ॥

मधु अंगों में लेकर गुंजन।
उतरा वसंत है नब आंगन ॥

बौर गंध फैला आम्रवन,
है करता मन उन्मत्त पागल।
मुस्काते कुसमित वसंत से,
जो पीले अनुरंजित पाटल ॥

खिले गेहूँ चने दल के दल,
करो सुरभित वसुधा का मन ।
तेलहन, तीसी के फूलों से,
चित्रित है जगती का आंगन ।।

मधु अंगों में लेकर गुंजन ।
उतरा वसंत है नव आंगन ।।

मौन युक्त शांत प्रांत सा, रे,
पुलकित उल्लसित हर्षित पीपल ।
है झूक रहे लघुपंख खोल,
अरुण अरुण उसके किसलय दल ।।

विकसित पूरे गंध युक्त वन,
धरती के सारे सुप्त सुमन ।
हरित-पत्र पर धर कर तनमन,
फूलों से आच्छादित सहजन ।।

मधु अंगों में लेकर गुंजन,
उतरा वसंत है नव आंगन ।।

★

पल्लव-पल्लव आज नया है

कौन निमति यह सुषमा वाली,
मद से माती डाली - डाली।

कहीं हरी है, कहीं घनी है,
कहीं अधिक चुनरिया लाली।
झूम रहे भौंरे मद माते,
पीली - पीली डाली - डाली।।

इस महुए का रूप, अरे हां,
कितना सुन्दर बन पाया है।
डाल - डाल में लाल - लाल रे,
पल्लव - पल्लव आज नया है।।

कौन नियति यह सुषमा वाली,
मद से माती डाली - डाली।

नीम आम्रवन में यहां वहां,
गजब आज हरीतिम छाई।
पीकर क्या नव-रंगको अब,
अपनी डाली हरी बनायी।।

पती पतो में, डाल - डाल में,
आज जवानी आदमकी है।
जूही और कटेली खुशबू से,
वासंतिक आंगन दकम, ।

कौन नियति यह सुषमा वाली,
मद से माती डाली - डाली ॥

जीवन का कण - कण पराग से,
आज पूर्ण हो हरा भरा है।
सूख गया था जो पहले हां,
वही वृक्ष भी आज हरा है ॥

भरी हुई है मधु रस से नव,
वसुधा की वासंतिक प्याली।
इस की मादकता होती है,
गजब निराली री मतवाली ॥

जिधर दृष्टि छिटकी है लाली,
मद से माती डाली - डाली।

—:०:—

वसंत आया वसंत आया

वसंत आया, वसंत आया ।
अब आम्र कानन लहराया ।।

पीपल की पुष्पित डाली है,
मंजरी की महक निराली है ।
रे शोभा अद्‌भुत है कैसी,
तरू की हरी हरी डाली है ।।

नीम के हरे भरे पत्तों से,
झर हरियाली टपक रही है ।
डाली डाली मिलने को अब,
हाँ आपस में लपक रही है ।।

कोमल कोमल किसलय पर,
ऋतु राज सौन्दर्य छाया ।
पुष्पों के भोने सौरभ पर,

वसंत आया, वसंत आया ।

रूनझुन पगध्वनि सुनाओ ।
डाल डाल में अगनित आशा,
चातक कंठ है अति प्यासा ।।
डाली में परिमल विकसाओ ।
क्षिप्र से क्षिप्रतर हो आओ ।।

पींपल की हरी - भरी डाली,
छिपती उसमें कोयल काली।
पाटल, जूही और चमेली,
वे वैभव को कैसे पाली ।।

फूलों की विकसित कलियों पर
अलियों पग झुंड बुलाओ
रुनझुन का ध्वनि सुनाओ ।।

★

कोयल गीत सुनाओं

कोयल गीत सुनाओ।

मधुर - मधुर बोली से।
जग का मन बहलाओ॥
अन्तर्वीणा के तार।
उन तारों से तू गा॥

निर्जन वन का गाओ।
कोयल गीत सुनाओ॥

तू वसंत में नव - वन।
फूलों की डाली पर॥
पंखों को फैलाओ।
कोयल गीत सुनाओ॥

जूही, गुलाब चंपा।
अनुरंजित विकसित से॥
संचित दुलार लूटा।
मुरझाए डालों से॥

अमृत शीतल बरसाओ।
कोयल गीत सुनाओ॥

—:o:—

काली कोयल बोलो तो

छेड़ती हो राग कैसी
काली कोयल बोलो तो ?
शुष्क धरा के ऊपर अब
अमृत मय घोल घोलो तो ।।

तू कंठो से जब गाती,
सृष्टि तार झंकृत होता ।
बहता है धरती ऊपर,
ध्वनि राग मधुमय सोता ।।

डाल-डाल फुनगी पल्लव से,
है मीठी बोली गुंज रही ।
किस महा सितमगर सी,
मीठी बोली बोल रही ।।

तू काली पर तेरी बोली,
हृदय बीच चुभ जाती है ।
नव प्रेमी के मधुर प्रेम में,
दर्द राग तू गाती है ।।

ओ प्रिय वैभव की रानी,
किसको याद दिलाती हो ।
पेड़ों की फुनगी ऊपर,
किसको नित्य बुलाती हो ।।

कौन तुम्हारा साथी जो,
कुंज बीच छिप-छिप जाता ।
तेरी दर्दे उल्फ़त सुन,
पास नहीं तेरे आता ॥

छेड़ती हो राग कैसी,
काली कोयल बोलो तो ?

नयनों को चैन नहीं होता

विनदेखे तुमको पलभर भी,
नयनों को चैन नहीं होता ।
टिक नहीं पाता क्षणभर भी,
यह मन खोया-खोया होता ।।

लोल लहरियाँ जातीं खोजो,
लहरों के भीषण नर्तन में ।
वैसे ही मनभाव हमारे,
खोये रहते प्रत्यावर्तन में ।।

विन देखे तुम को पल भी... ...

रूपराशि

तेरी पुलकित रूपरश्मि में,
मधुर चांदनी मात हुई।

प्यार भरी वे तीखी आँखें,
हृदय बीच चुभगईं चुभगईं।
मधु से सिक्त तुम्हारी पाँखें,
अपने बंधन में बांध गईं।।

मिल अनुपम शीतलता तुम से,
अभिलाषाएँ शान्त हुईं।
तेरी पुलकित रूप राशि में,
मधुर चांदनी मात हुई।।

तेरे रूपों में गंधभरा,
है गध भरी उसमें मादकता।
रंग भरी धरती ऊपर तू,
अमर बेल की सुखद लता।।

तेरे पायल झंकारों से,
हृदथ बीच अनुराग हुआ।
उमड़ पड़ी लहरें कितनी फिर,
मधु भावों का संचार हुआ।।

तेरी पुलकित रूपराश्मि में,
मधुर चांदनी मात हुई।

रूप तुम्हारा

गंधभरा मादक खुशबु से,
प्रिय रूप तुम्हारा देख लिया।

देख लिया मैंने तेरा वह,
प्रिय रूप निराला देख लिया।
गंध भरा मादक खुशबू से,

प्रिये रूप तुम्हारा देख लिया।

वह मधु की छाया देख लिया,
ज्योति की रेखा देख लिया।
उन्मत यौवन में देख लिया,

प्रिय रूप तुम्हारा देख लिया।

गंधों का उपवन देख लिया,
चंदच की बगिया देख लिया।
वे शोख निगाहें देख लिया,

प्रिय रूप तुम्हारा देख लिय'।

लहरों का विछलन देख लिया,
चंचल नयनों को देख लिया।
बादल सम अलकें देख लिया,

प्रिय रूप तुम्हारा देख लिया।

——

रूपमयी

तुम भरदो एक नया मुस्मान
तुम गादो एक नया फिर गान

तेरे रूप भरे चितवन में,
मधु वसंत की मधुर लहरियाँ।
फुनगी ऊपर खिली हुई हैं,
मादक यौवन उन्मत कलियाँ ।।

जीवन के उत्ताप हमारे,
तेरी बाणी से मिट जाते।
उन सुन्दर लोल कपोलों से,
सुधाबिन्दु हैं झर झर जाते ।।

रंगभरी तेरी मादकता,
जीवन में प्राण भरे! भर देती।
उमड़ घुमड़ बादल के ऐसा,
धुंआ धार गोदी में देती ।।

तुम भर दो एक नया मुस्कान।
तुम गादो एक नया फिर गान ।।

*

आँखें किसको ढूँढ़ा करती

जग में छायी मधु बहार में,
आँखें किसकों ढूँढ़ा करतीं।
रस सिक्त मधु की पंखुड़ियां,
रे अपने में लुभा न सकतीं ॥

उस चितवन से मेरी चितवन,
तो कुछ वैसी बिंध गई है।
रे हृदय हमारा उस नवरस,
भरे हृदय से रिझ गया है ॥

उस चितवन की शोभा बहुत,
ही सुन्दर मयी निराली है।
रूपमयो सोन्दर्यं लिये वह,
गंध भरी मादक प्याली है ॥

वह छवि निरालो नई अपनी,
जिसमें है स्थिर मनोरंजन।
मुक्त - मुक्त वह महामुक्ता रे,
उसके भीतर आंतरिक्त स्पन्दन ॥

——

आँखों का मधुमास

तेरी आँखों का मधुमास प्रिय
मेरे मन को भा जाता है।
उमड़घुमड़ बादल सा वह
अपना रूप दिखा जाता है।।

सूनी डलिया मेरी बगिया,
की हरियाली से घिर जाती है।
छिपी हुई तेरी मुस्कान प्रिये,
गति मयता को भर जाती है।।

फूलों की छाया भाती हैं,
कोयल गीत मधुर गाती है।
मधुर मधुर तेरी स्मृतियाँ,
फूलदलों से झर जाती हैं।।

मेरे इस मृदु मानस पट पर,
मधुमास प्रिये छा जाता है।
उन नयनों की चंचलता में,
प्रिय बरबस मन खो जाता है।।



गुलाबी चितवन

तुम बरबस बार - बार मेरा,
मन खींच लिया करती हो।
नहीं चाहकर तेरे आगे,
मैं झुक-झुक जाया करता हूँ॥

रूक नहीं पाता मन मेरा,
उमड़ - घुमड़ जाया करता है।
हार - हार अपने कदमों से,
तेरे पास आया करता है॥

जान नहीं पाया मैं तुममें,
कैसा नूतन प्राण भरा है।
तप्त हृदय बहला देने को,
सुधा बिन्दु का रूप धरा है॥

चितवन में रख रंग गुलाबी,
क्यों तू लुभा दिया करती हो।
जग के शुष्क प्राण को हरदम,
तुम ही सरस किया करती हो।

तुम बरबश बार-बार मेरा मन,
खींच लिया करती हो।

——

आती उषा सुनहली

आती उषा सुनहली,
अंग में नवरंग भर।
गुंजित बोल रहे हैं,
कर पक्षी रव गान।
आलोक जगाती है।
भरकर नूतन प्राण॥

हर डाली पर आकर,
है वह नृत्य दिखाती।
लाली घोल कटोरे,
प्राची में भर जाती॥

अपना अंग सजाकर,
क्षितिज में बिभा बिछ कर।
पैरों का फिर छिपाकार॥
है वह नृत्य दिखाती,

जग मन्दिर से परिचित,
कर रही है साधना।
चलती रुकती क्या कली,
करती नव अराधना॥

गति से अपने मगपर,
आती उषा सुनहली।

नव वसंत आंगन में आता

हरित डाल को हाथों लेकर,
कुसुम कुसुम को साथ जगाता।
सुप्तभाव वन मुक्त पैख के,
गीत खुशी का अपना गाता॥

जागृत भृंग वर्ग सहचर हैं,
नव मधु व्यापार लिए आता।
पुष्प - पुष्प की कुंज गली से,
गुंजन करता चलता जाता॥

छम् छम् झन् झन् खूब बजाता।
नव वसंत आंगन में आता॥

कुसुम डाल तितली को लेकर,
झुक नत्मस्तक हो रह जाती।
किंचित पंखच्युत नव दल पर,
सिमट सिमट कर है रह जाती॥

छिप - छिप जाता रूप श्रृंगार;
निर्निमेष अपलक आंखों में।
शत-शत रवि किरणों की आभा,
है सिमटी वासंतिक पांखों में॥

छम् - छम् झन् - झन् खूब बजाता ।
नव वसंत आंगन में आता ।।

निर्निमेष अपलक आंखों से,
लेता भ्रमर तव रुप निहार ।
नव वसंत में नया रुप धर,
उपवन डाल करती श्रृंगार ।।

कुसमित फूलपर भ्रमर गाता,
सिक्त पंख से मधु टपकाता ।
इस वसंत की नवशोभा में,
वृक्ष अपना फूल बरसाता ।।

सुरभित रुप सब है भाता ।
नव वसंत आँगन में आता ।।

—:o:—

युग-वीणे

गुनगुना कर स्वर सुना कर,
एक बार झंकृत हो।
मौन सोया, तार फिर,
मचल मचल डोल उठे॥

झंकृत कर नव तार,
प्रकम्पन हिलोर ले उठे।
गीत चिर अंकित हो,
एक बार झंकृत हो॥

आओ मींड़ तुम्हारा,
कस दूँ ढीले तारें।
लुटा लुटा कर सोये,
अपने विस्तृत — प्यारें॥

पंख स्वर्ण जटिल हो,
एक बार झंकृत हो।
चिन्तित सभी निवासी,
ले अंतर पीड़ाएँ॥

क्यों नहीं तू गाती,
युग बीती गाथाएँ।
गीत चिर अंकित हो,
एक बार झंकृत हो॥

आशाओं की लहरें,
सोती तेरे भीतर।
निकल निकल कर देगी,
अमूल सदृश तर बर॥

लहर लहर नर्तित हो,
एक बार झंकृत हो॥



गुलाब

नव रस भीनी पंखुड़ियों में,
तुम मधुर गंध भरे हुए हो।
तुम सब फूलों में राजा हो,
तुम अति अनुपम अति सुन्दर हो ॥

तुम में जीवन का सौरभ है,
तेरे अंगों में शतदल है।
काँटों की शय्या पर सोये,
तनिक नहीं तुम में हलचल है ॥

पवन हिलोरा जब देता है,
मंद - मंद डोला करते हो।
धरती को तू स्वर्ग बनाकर,
सरस सुधा संचित करते हो ॥

तुममें यौवन उन्माद भरा,
निखिल सृष्टि मुस्कान लिए हो।
लूटा - लूटा अपने हाथों से,
तुम तरल अमृत पान किए हो ॥

★